6

यीशु ने अपने विषय में क्या कहा?

मैंने एक बार ''क्या यीशु परमेश्वर था?'' विषय पर नये नियम के एक प्रसिद्ध विद्वान के लैक्चर में भाग लिया। सभागार ऐसे निर्णायक प्रश्न पर इस महान व्यक्ति के विचारों को सुनने के लिए उत्सुक लोगों से भरा हुआ था। उसने यह कहते हुए आरम्भ किया कि इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए पहले हमें यूहन्ना रचित सुसमाचार की हर मान्यता को निकालना होगा, क्योंकि यूहन्ना रचित सुसमाचार ही है, जो यीशु के ईश्वरीय स्वभाव पर सबसे अधिक ज़ोर देता है। फिर उसने कहा कि हमें पूरे नये नियम में से किसी भी और बात या अन्य संकेत को खारिज करना होगा, जो ईश्वरीय यीशु की ओर इशारा करता हो, क्योंकि यह स्पष्ट रूप में आरम्भिक कलीसिया द्वारा बनाए गए थे और यीशु ने इन्हें नहीं दिया था। श्रोताओं को बताया गया कि तब हम इस प्रश्न का कि ''यीशु कौन था?'' का उत्तर दे सकते हैं। वक्ता केवल एक ही निष्कर्ष पर पहुंच सकता था। ऐसी नकारात्मक मान्यताओं के साथ आरम्भ करके और सब विपरीत प्रमाणों को निकालकर स्वभाविक रूप में उसे वही नकारात्मक उत्तर मिला, जो वह चाह रहा था।

यीशु नासरी के व्यक्तित्व के आस पास के बड़े ऐतिहासिक मुद्दों में से एक परिचय का उसका अपना बोध था कि वह अपने विषय में क्या कहता है? अब यह उससे अलग प्रश्न है कि उसने जो वह *था* वह होने का दावा किया या नहीं। ऐसे आलोचक सदा से रहे हैं, जो दावे करते हैं कि वह इस्राएल का मसीहा, परमेश्वर का पुत्र, परमेश्वर/मनुष्य/बना, नहीं था। हाल ही के यीशु के इनकारों में इनमें से कोई भी न होने की बात अलग है। अब दावा यह किया जाता है कि उसने कभी *कहा* ही नहीं कि वह इन भूमिकाओं में से किसी को पूरा कर रहा है और उसने अपने आपको इनमें से किसी प्रकार से नहीं देखा। तो फिर आप कहां कह सकते हैं कि सुसमाचर के वृत्तांतों में बताई गई बातों वाली धारणाएं कहां से आईं? हमें बताया जाता है कि इसका उत्तर यह है कि ये वह विचार हैं, जो बाद में यीशु के विषय में कलीसिया *मानने* लगी और उन्होंने इसे इस प्रकार ठोस बनाने के लिए सुसमाचार की पुस्तकों में लिख दिया, जैसे यह स्वयं यीशु के दावे हों। अन्य शब्दों में, उन आलोचकों के साथ यीशु ने कभी सुसमाचार की पुस्तकों में दावा की गई बातों में से होने का दावा नहीं किया, और उसने यह दावा कभी नहीं किया कि वह, वह था जो मसीहियत ने बाद में उसे बना दिया।

यीशु के विषय में अन्य किसी भी बात की तरह सुसमाचार के विवरण हमारी जानकारी का मुख्य स्रोत हैं। जो लोग उन्हें विश्वसनीय मानने से इनकार करते हैं, वे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि हम यीशु के बारे में लगभग कुछ नहीं जान सकते। स्वाभाविक है कि यह उसके लिए हर प्रकार की व्याख्याओं का रास्ता खोल देता है। आमतौर पर यह ढंग अपनाने वाला व्याख्याकार अपने मन में पहले से यीशु के विषय में बने विचार से आरम्भ करता है, फिर उसकी अपनी बनाई हुई तस्वीर से मेल न खाने वाली हर बात को सुसमाचार की पुस्तकों में से निकाल देता है। ''यीशु सेमिनार,'' के साथ ऐसा ही हुआ, एक ऐसा सेमिनार जिसने यीशु की बातों की अपनी खोज यह

कहते हुए आरम्भ की थी कि वे कलीसिया और जो यह उसके विषय में विश्वास करने लगी थी को उस से ''यीशु को छुड़ा'' लेंगे।[1] जिस ''यीशु'' का वर्णन उन्होंने किया वह नये नियम में दिखाए गए यीशु से बहुत अलग था।

लोग प्रमाण देखने के लिए उसी दिशा में बढ़ते हैं, जिसमें उनका पहने से विश्वास होता है। हम सभी की अपनी अपनी मान्यताएं होती हैं और वे मान्यताएं आमतौर पर उसकी के साथ किसी बात को स्वीकार करने या ठुकराने का कारण बनती हैं। कुछ लोग पूरी तरह से तटस्थ होने का दावा करते हैं, पर ऐसा असम्भव है। हम सभी के अपने-अपने दृष्टिकोण होते हैं, विशेषकर जहां कोई बात यीशु के परिचय जैसी महत्वपूर्ण बात हो। हम ''पूर्व कल्पनारहित'' होने के योग्य हैं इसलिए बेहतर यही होगा कि पूरी तरह से तटस्थ होने और ऐसे बात करने का दावा करने के बजाय कि प्रमाण की हमारे विचार में कोई दिक्कत नहीं है, जहां तक हो सके अपनी पूर्व कल्पनाओं के प्रति *ईमानदार* रहें।

जैसे पहले कहा गया था, मैं सुसमाचार को केवल विश्वास के आधार पर ही नहीं, बल्कि इतिहास के दृष्टिकोण से भी यीशु की जानकारी देने के विश्वसनीय स्रोतों के रूप में मानता हूं। जो लोग उलटा सोचते हैं, उन्हें इसके विपरीत अपना प्रमाण देना चाहिए। समय ने और सुसमाचार की पुस्तकों ने इन्हें ऐतिहासिक रूप से और तथ्यात्मक रूप में सही साबित कर दिया है। तो फिर हम क्यों मान लें कि यीशु के दावों के बारे में वे जो कुछ कहते हैं, वे गलत हैं? हम उन दावों को मानना चुनते हैं या नहीं, वह अलग बात है। हमारे लिए यह समझना आवश्यक है कि ऐतिहासिक आंकड़े अपने आप में न तो आत्मिक दावों की पुष्टि कर सकते हैं और उनका इनकार कर सकते हैं। इसलिए प्रमाणों को स्वयं ही बोलने दें।

उदाहरण के लिए सुसमाचार के अपने वृत्तांतों का आरम्भ करने का लूका का ढंग यह दिखाता है कि वह एक सचेत इतिहासकार के रूप में, जिसने अपने पास उपलब्ध जानकारी की छानबीन करके उसे थियुफिलुस नामक किसी व्यक्ति के लाभ के लिए प्रस्तुत करने के लिए लिख रहा था। उसके आरम्भिक शब्दों पर ध्यान दें।

> बहुत से लोगों ने उन बातों का जो हमारे बीच में पूरी हुई हैं, विवरण इकट्ठा करने का काम किया है, जैसा कि उन्होंने जो आरम्भ से इन बातों के देखने वाले और वचन के सेवक थे हम तक पहुंचाया है, मुझे भी अति श्रेष्ठ थियुफिलुस, कुछ देर तक उन्हें ध्यान से देखने के बाद, अच्छा लगा कि तुझे उस सब का हाल क्रमानुसार लिखूं। ताकि तुझे उन बातों के अटल होने का यकीन हो, जिनकी तू ने शिक्षा पाई है (लूका 1:1-4; ESV)।

फिर लूका एक ऐतिहासिक हवाले के साथ अपना विवरण आरम्भ करने के लिए आगे बढ़ा, ''यहूदिया के राजा के समय'' (आयत 5)। लूका 3:1, 2 में दिया गया ऐतिहासिक संदर्भ याद रखें। उसके काम की विशेषता ''एक-बार-की-बात-है'' नहीं है।

लूका रचित सुसमाचार की यह भूमिका कई बातों में महत्वपूर्ण है। लूका ने इसके लिए तैयारी की थी। वह यीशु की कहानी लिखने के ''कई'' प्रयासों से अवगत था। हम जानते हैं कि उसने उन्हें पढ़ा था, क्योंकि उसने अपनी पुस्तक को ''क्रमानुसार'' विवरण होने के रूप में उनसे अलग किया। (उसे यह लगता था कि दूसरों के काम ''अव्यवस्थित'' थे? हमें नहीं

मालूम। हमें यह भी नहीं मालूम कि ये पुस्तकें कौन सी थीं। स्पष्टतया वे मत्ती, मरकुस और यूहन्ना नहीं थीं, क्योंकि लूका का विवरण मत्ती और मरकुस के विवरणों से मेल बहुत खाता था और कई गणनाओं के अनुसार यूहन्ना का वृत्तांत अभी लिखा नहीं गया था।) इसके अलावा लूका ने ईमानदारी से माना कि वह इन बातों का प्रत्यक्षदर्शी नहीं था बल्कि उसने स्पष्टतया उन लोगों से बात की जिन्होंने इन बातों को देखा था। उसने कहा कि जो घटनाएं उसने लिखी हैं वे ''उसे पहले ही से उन बातों के देखने वालों और वचन के सेवकों'' से मिली थीं (लूका 1:2)। लूका के लिखने के उद्देश्य पर ध्यान दें, ताकि तू यह जान लें कि जिनती तूने शिक्षा पाई है *कैसी* अटल है (लूका 1:4)। थियुफिलुस पहले से मसीह था या नहीं इसका पक्का पता नहीं है। इसे मसीहियत की कुछ जानकारी थी, परन्तु स्पष्टतया लूका को लगा कि कहीं न कहीं इसमें कमी है। वह थियुफिलुस को तथ्य बताना चाहता था। लूका स्पष्ट रूप में *जो कुछ हुआ* वही बताना चाहता था (देखें प्रेरितों 1:1)। कोई भी जो इस पर संदेह करता है वह उस प्रमाण का बोझ उठाता है कि लूका या तो झूठ बोल रहा था या उससे गलती लगी।

यही बातें सुसमाचार के अन्य विवरणों के लिए कही जा सकती हैं, बेशक उनमें उतनी स्पष्ट मंशाएं नहीं बताई गईं जिनती लूका में। उनमें से कोई भी यीशु की कहानी को ऐतिहासिक रिक्तत्ता में नहीं बताता है। आरम्भिक कलीसिया उन्हें यीशु और उसके कामों के तथ्यात्मक विवरणों के रूप में मानती थी। यदि हम इन घटनाओं पर मसीही विश्वास से मेल खाते लगभग दो हज़ार वर्षों को फैंक दें तो हमें सुसमाचार के लेखकों का इनकार करते हुए अपने लिए यथार्थ (और सर्वज्ञ) के दावे से भी बेहतर करना होगा, जो उन घटनाओं के बहुत आस-पास रहे हों और उन्हें आंखों देखा हो प्रत्यक्षदर्शियों से मिले हों।

यहूदियों का राजा और असली इस्राएल का प्रतिनिधि

यीशु के कुछ दावे ज़बानी नहीं थे, पर वे कुछ बातों में इतने स्पष्ट थे कि उसने उन्हें पुराने नियम से कई प्रतिज्ञाओं के साथ सम्बन्ध में अपना परिचय दिखाया। इन्हें ''काम करने वाले दृष्टांत'' कहा जा सकता है।

उदाहरण के लिए मरकुस 3:13-19 अपने बारह प्रेरितों के साथ यीशु की मुलाकात को दिखाता है (चाहे मरकुस 3 में उन्हें नहीं बुलाया जाता)। सुसमाचार के चारों वृत्तांत यह मानते हैं कि यीशु के अन्य कई चेलों के अलावा उसके बारह अनुयायियों का एक बेहतरीन कथन था, और वह अपनी सार्वजनिक सेवकाई का अधिकतर समय उसके उनके साथ न होने पर अगुआई देने के लिए उन्हें सिखाने और प्रशिक्षण देने में बिताता था। क्या आप कभी चकित हुए हैं कि उसने *बारह* को क्यों ठहराया? दस, बारह, बीस या कोई और संख्या क्यों नहीं? प्रेरितों 1:15-26 कहता है कि यीशु के स्वर्ग में उठा लिए जाने के बाद शेष चेलों (जो लगभग 120 थे) ने यहूदा की जगह जिसने प्रेरिताई की अपनी जगह को दागी कर दिया था, मत्तियाह को चुना। परन्तु मूल बारह के शेष लोगों में से मरना आरम्भ होने से के बाद (जैसे प्रेरितों 12:1 में है), याकूब की मृत्यु से यहूदा की तरह उसकी जगह किसी को *नहीं* दी गई। संख्या बारह का कुछ महत्व लगता है।

स्पष्टतया यीशु बाहर लोगों को परमेश्वर के नये लोगों (जो बाद में कलीसिया कहलाने लगे थे) की अगवाई के लिए वैसे ही नियुक्त कर रहा था, जैसे बारह पुरखाओं (याकूब को बारह

पुत्र) द्वारा इस्राएल जाति की अगुआई की गई थी, जिनमें प्रत्येक एक विशेष कबीले की अगुआई करता था। यीशु ने स्पष्टतया अपने आपको ''नया इस्राएल'' बनाने वाले के रूप में देखा; इसलिए इसके लिए बारह आधिकारात्मक अगुओं का होना आवश्यक था। इस व्याख्या की पुष्टि के लिए (देखें प्रकाशितवाक्य 21:12-14; इसके अलावा परमेश्वर के लोगों के लिए प्रतीक के रूप में प्रकाशितवाक्य की पूरी पुस्तक में अंग ''बारह'' और इसके गुणाकों के महत्व पर भी ध्यान दें।)

यदि बारह प्रेरितों को नये इस्राएल के अगुओं के रूप में यीशु द्वारा ठहराया गया था तो यीशु ने स्वयं को इस्राएल के राजा के रूप में देखा। यानी यह कि उसके इस विचार का प्रमाण यरूशलेम में उसके अंतिम बार प्रवेश करने के ढंग से भी मिलता है। मत्ती 21:1-5 कहता है कि वह नगर में गधे पर सवार होकर आया। यह अपनी राजधानी में प्रवेश करने के लिए किसी राजा का सामान्य ढंग नहीं होगा! यीशु क्या कर रहा था और क्यों? यीशु के लिए यरूशलेम में इस विशेष जानवर पर सवारी के लिए संक्षिप्त तैयारियों के बारे में बताकर मत्ती यह स्पष्ट कर देता है कि यह कोई संयोगवंश घटना नहीं थी। इसका कारण तब और स्पष्ट हो जाता है जब वचन की तुलना जकर्याह 9:9 से की जाती है:

> हे सिय्योन बहुत ही मगन हो!
> हे यरूशलेम जयजयकार कर!
> क्योंकि तेरा राजा तेरे पास आएगा;
> वह धर्मी और उद्धार पाया हुआ है,
> वह दीन है, और गद्हे पर
> वरन गद्ही के बच्चे पर चढ़ा हुआ आएगा।

पवित्र नगर में जाने के लिए यातायात की यीशु की पसंद सोच समझकर इस्राएल के राजा के आने की उस भविष्यवाणी को पूरा करती थी। इस प्रकार नगर में प्रवेश करके यीशु वह राजा होने का दावा कर रहा था।

क्या यीशु ने ऐसा कुछ कहा जो इस्राएल के राजा और राष्ट्रीय प्रतिनिधि के रूप में उसकी इस तस्वीर की पुष्टि करता हो: मरकुस 10:42-45

> और यीशु ने उन को पास बुला कर उन से कहा, तुम जानते हो, कि जो अन्य जातियों के हाकिम समझे जाते हैं, वे उन पर प्रभुता करते हैं; और उन में जो बड़े हैं, उन पर अधिकार जताते हैं। पर तुम में ऐसा नहीं है, बरन जो कोई तुम में बड़ा होना चाहे वह तुम्हारा सेवक बने। और जो कोई तुम में प्रधान होना चाहे, वह सब का दास बने। क्योंकि मनुष्य का पुत्र इसलिए नहीं आया, कि उस की सेवा टहल की जाए, पर इसलिए आया, कि आप सेवा टहल करे, और बहुतों की छुड़ौती के लिए अपना प्राण दे।

अन्तिम वाक्य इस बात का संकेत देता है यीशु ने अपने आपको यशायाह 42:1-4 और 52:13-53:12 वाले ''सेवक के गीतों'' में बताया ''दुखी सेवक'' (जो दूसरों के छुटकारे के रूप में अपना प्राण देगा) कहा था। यशायाह 49:3 भी देखें: ''तू मेरा दास इस्राएल है, मैं तुझ में अपनी महिमा प्रगट करूंगा।'' इस आयत में कम से कम ''सेवक'' कहा जाति के रूप में पहचाना

गया है। मरकुस 10:45 में यीशु ने अपने लिए उस भूमिका को निभाया। उसने न केवल इस्राएल के राजा बल्कि वास्तविक इस्राएल का प्रतिनिधि होने का भी दावा किया।

मसीहा

जैसा कि पहले संकेत दिया गया है, ''मसीहा'' शब्द एक इब्रानी शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ है ''अभिषिक्त।'' पुराने नियम में राजाओं, भविष्यवक्ताओं और न्यायियों को आम तौर पर परमेश्वर की विशेष सेवा देने के लिए नियुक्त किया जाता था। अन्ततः यह विश्वास बन गया कि एक विलक्षण मसीहा आने वाला है, जो पूरी तरह से और अन्तिम रूप में इस्राएल को उसे सारे दुखों से छुड़ाएगा। इस विश्वास का मूल 2 शमुएल 7 में मिलता है जो हमें परमेश्वर के लिए घर बनाने की राजा दाऊद की इच्छा बताता है। नाथान नामक नबी के द्वारा परमेश्वर ने उत्तर दिया कि घर बनाने के लिए उसे दाऊद की आवश्यकता नहीं है और उसने उसे घर बनाने को नहीं कहा। इसके बजाय यहोवा ने कहा, दाऊद के लिए एक घर बनाएगा। परमेश्वर एक निवास की नहीं, बल्कि एक वंशावली की, यानी वंशजों की रेखा (जैसे ''विंसर का घर'' कहने का हमारा अर्थ होता है, यानी शासकों की एक विशेष पंक्ति) की बात कर रहा था। इन लोगों ने दाऊद की ''संतान'' से आरम्भ करके सदा के लिए इस्राएल के सिंहासन पर बैठना था। इस ''संतान'' का और परिचय केवल दाऊद के पुत्र के रूप में नहीं, बल्कि परमेश्वर के पुत्र के रूप में करवाया गया है। परमेश्वर ने कहा, ''... मैं उसकी राजगद्दी को सदैव स्थिर रखूंगा। मैं उसका पिता ठहरूंगा, और वह मेरा पुत्र ठहरेगा'' (2 शमुएल 7:13, 14क)। यह सब दाऊद के सिंहासन के वारिस सुलैमान के लिए कहा गया हो सकता है। परन्तु फिर परमेश्वर ने ''सदैव'' कहने की बात आरम्भ की। यहां की गई कुछ प्रतिज्ञाएं सुलैमान की शासन में पूरी नहीं हुईं। वे किसी और के लिए आगे की ओर संकेत करती प्रतीत होती हैं। यह ''कोई और'' इस्राएल का आने वाला मसीहा था। इस्राएल के इतिहास के अंधकार के समय, छुटकारा दिलाने वाले के आने की प्रतीक्षा लोगों को यह आशा दिलाती रही कि परमेश्वर अन्त में अपने लोगों को छुड़ाने के लिए इस ''अभिषिक्त'' को भेजकर पूरा करेगा।

यीशु इसमें कैसे मेल खाता है? याद रखें कि नये नियम में यीशु को बार-बार ''यीशु ख्रिस्त'' कहा गया है। ''ख्रिस्त'' यूनानी शब्द (*christos*) से लिया गया है जो ''मसीहा'' जो ''अभिषिक्त'' के लिए इब्रानी शब्द का समानार्थक शब्द है। नये नियम के लेखक यीशु को ''यीशु ख्रिस्त'' तो कह रहे थे पर वे उसका पहला और अन्तिम नाम नहीं बता रहे थे। उसका नाम यीशु है, और उसे इस्राएल के चिर प्रतिक्षित मसीहा के रूप में दिखाया जा रहा था।

मत्ती 16:13-17 में लिखित एक बहुत महत्वपूर्ण अवसर पर यीशु ने अपने चेलों से पूछा कि कि लोग उसके बारे में क्या कहते हैं, उनका उत्तर था, ''कुछ तो यूहन्ना बपतिस्मा देने वाला कहते हैं, और कुछ एलिय्याह, और कुछ यिर्मयाह या भविष्यवक्ताओं में से एक कहते हैं।'' इनमें से कोई भी अनादरपूर्ण परिचय नहीं है, बल्कि वे गलील में यीशु की सेवकाई के दौरान लोगों में उसे उच्च सम्मान को दिखाते हैं पर वे भी पूर्ण सत्य नहीं थे, इसलिए यीशु ने थोड़ा और ज़ोर देना चाहा: ''परन्तु *तुम* मुझे क्या कहते हो?'' कुछ समय तक उसके उनके साथ रहने के बाद उन्हें क्या लगा था कि वह कौन है? उन्होंने जो निष्कर्ष निकाला था वह क्या था? बेशक यह

स्वाभाविक अर्थ में आवश्यक था कि अन्य लोग उसके बारे में क्या कहते हैं पर यह बुहुत ही निर्णायक था कि प्रेरित उसके बारे में क्या सोचते हैं। परतस ने चेलों की ओर से कहा: ''तू जीवते परमेश्वर का पुत्र मसीह है'' बारहों ने यह निष्कर्ष निकाला था कि यीशु वास्तव में इस्राएल का चिर-प्रतीक्षित मसीहा है। यीशु ने उत्तर दिया कि ''हे शमौन, योना के पुत्र, तू धन्य है; क्योंकि मांस और लहू ने नहीं, परन्तु मेरे पिता ने जो स्वर्ग में है, यह बात तुझ पर प्रकट की है।'' ध्यान दें कि यीशु ने अपनी पहचान के सम्बन्ध में पतरस की बात से सहमति जताई और दाऊद से की गई परमेश्वर की प्रतिज्ञा के अनुसार, परमेश्वर को ''मेरे पिता'' कहकर सम्बोधित किया।

उतना ही महत्वपूर्ण वह अवसर है जब यहूदी अधिकारियों द्वारा उससे पूछताछ किए जाने पर, यीशु से सीधे सवाल किया गया था, ''क्या तू मसीह है?'' सुसमाचार के तीनों समानांतर विवरणों में थोड़े बहुत अन्तर के साथ इसी प्रश्न को बताया गया है (मत्ती 26:63, 64; मरकुस 14:61, 62; लूका 22:67-71)। मत्ती में यीशु का उत्तर है ''तू ने आप ही कह दिया।'' मरकुस में है ''मैं हूं'' और लूका में है ''क्योंकि मैं हूं।'' हो सकता है कि ये सभी उत्तर हमें एक ही न लगें पर हर घटना में यीशु के उत्तर को सकारात्मक अर्थ में लिया था। ये भिन्नताएं स्पष्तया इस तथ्य के बारे में हैं कि यीशु इब्रानी भाषा में बात कर रहा था जबकि सुसमाचार के प्रत्येक लेखक ने इसे यूनानी भाषा में लिखा। शायद यीशु अपनी पहचान का इनकार कर रहा था परन्तु जान-बूझकर अपने उत्तर पर अस्पष्ट था, क्योंकि उसे मालूम था कि उसके कहने का जो अर्थ और उनका क्या नहीं। उनके प्रश्न का उत्तर सम्भवतया कुछ इस प्रकार था ''क्या तू वह राजनैतिक-सैनिक छुड़ाने वाला होने का दावा करता है, जिसकी हम राह देख रहे हैं?'' वास्तव में यीशु प्रतिज्ञा किया हुआ होने का दावा कर रहा था परन्तु अलग अर्थ में; उसने अपने लोगों को उनके सबसे बड़े शत्रु पाप के हाथ से छुड़ाना था और यह उसने राजा बनने और सैनिक शक्ति वाला होने की चालों से बचकर करना था।

मसीहा होने का एक और स्पष्ट दावा लूका 4:16-21 में मिलता है। यीशु अपने गृहनगर नासरत के आराधनालय में था। जब भविष्यवक्ताओं की पुस्तक में से पढ़ने का समय आया तो यीशु पढ़ने के लिए खड़ा हुआ। यशायाह की पत्री उसे दी गई और यीशु ने उसे पढ़ने के लिए खोला:

> प्रभु यहोवा का आत्मा मुझ पर है;
> क्योंकि यहोवा ने सुसमाचार सुनाने के लिए
> मेरा अभिषेक किया
> और मुझे इसलिए भेजा है कि खेदित मन के लोगों को शान्ति दूं;
> कि बंधुओं के लिए स्वतंत्रता का
> और कैदियों के लिए छुटकारे का प्रचार करूं;
> कि यहोवा के प्रसन्न रहने के वर्ष का ... प्रचार करूं (यशायाह 61:1, 2क)

यहूदी लोगों द्वारा वचन के इस भाग को मसीहा के आने वाले युग की भविष्यवाणी माना जाता था। जो कुछ इसके बाद हुआ उससे घटना का रंग ही बदल गया: ''आज यह लेख तुम्हारे सामने पूरा हुआ है'' (लूका 4:21)। अन्य शब्दों में यीशु दावा कर रहा था कि मसीहा के युग

का आरम्भ उसी के साथ हो चुका है, यानी वास्तव में भविष्यवाणी में जिसकी बात कही गई थी वह वही था और प्रभु यहोवा का आत्मा उस पर था और वही था जिसने निर्धनों को सुसमाचार सुनाना था।

मनुष्य का पुत्र

अभी हमने ऐसी किसी आयत का उल्लेख नहीं किया, जिसमें यीशु ने अपने आपको मसीहा होने का *स्पष्ट* दावा किया हो, चाहे हम देख चुके हैं कि वह अपने आपको इस प्रकार से नहीं मानता था। सुसमाचार के समानांतर वृत्तांतों के अनुसार यीशु अपने आपको ''मनुष्य का पुत्र'' कहलाना अधिक पसन्द करता था। यह ऐसा शीर्षक था जो कुछ-कुछ अस्पष्ट था। किसी को किसी ''का पुत्र'' कहना एक विशेष इब्रानी ढंग था जो उस व्यक्ति के स्वभाव की ओर संकेत करता था। उदाहरण के लिए, यहूदा को ''विनाश का पुत्र'' कहा गया (यूहन्ना 17:12) क्योंकि वह यीशु को पकड़वाने के लिए दोषी ठहरा। पौलुस के एक साथी का नाम बरनबास था, जिसका अर्थ है ''शांति का पुत्र'' (प्रेरितों 4:36), स्पष्टतया इसलिए वह पौलुस के साथ-साथ अन्यों के लिए भी प्रोत्साहन देने वाला व्यक्ति था। ''मनुष्य का पुत्र'' का अर्थ केवल ''मनुष्य जैसा'' या ''मानवीय जीव'' हो सकता है। हम इसे यहां छोड़ सकते हैं, पर दानिय्येल 7:13, 14 सुझाव देता है कि हमें नहीं छोड़ना चाहिए। दानिय्येल ने एक दर्शन की बात की जिसमें उसने ''मनुष्य के पुत्र सा कोई'' देखा:

> तब उसको ऐसी प्रभुता,
> महिमा और राज्य दिया गया,
> कि देश-देश और जाति-जाति के लोग
> और भिन्न-भिन्न भाषा बालने वाले सब उसके अधीन हों;
> उसकी प्रभुता सदा तक अटल,
> और उसका राज्य अविनाशी ठहरा।

इस वचन में ''मनुष्य की संतान'' का अर्थ केवल ''मानवीय जीव'' नहीं है। इस कारण कई यहूदियों का मानना था कि ''मनुष्य का पुत्र'' मसीहा का एक और नाम था। जब यीशु ने स्वयं को ''मनुष्य का पुत्र'' कहा तो, सम्भवतया लोग इस बात से चकित हुए कि इसका क्या अर्थ है। लगता है कि यीशु यही चाहता था। यह वह शीर्षक था जो वह दावा किए बिना मसीहा होने की उसकी सम्भावना का सुझाव देता है।

उसने केवल ''मैं मसीहा हूं'' क्यों नहीं कहा, उसके पास तो बहुत अच्छा कारण था। पहली सदी के यहूदी धर्म में कई ऐसे कारण पाए जाते थे कि मसीहा कौन हो सकता है और वह क्या करेगा। इनमें से अधिकतर विचार एक सैनिक अगुवे पर विचार पर केन्द्रित थे, जो रोम को उखाड़ फैंकेगा और इस्राएल की राजनैतिक शक्ति को बहाल कर देगा। वह सचमुच दाऊद की तरह एक महान योद्धा-राजा था, वह सच्चे अर्थ में ''दाऊद की संतान'' होना था। यदि यीशु अपने विषय में मसीहा से जुड़ी स्पष्ट भाषा का इस्तेमाल करता या दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता तो राजनैतिक प्रतिक्रियाएं अत्यधिक होतीं। उसने ऐसे परिदृश्य से बचने को

प्राथमिकता दी। निराश और हताश यहूदी मसीहा होने का दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति के पीछे चलने को तैयार थे, और हलचल पैदा करने में यीशु की कोई दिलचस्पी नहीं थी। उसके मिशन का उद्देश्य यह नहीं था। इसके अलावा वह नहीं चाहता था कि उसके चेले कम से कम जब तक इसका अर्थ नहीं समझते, तब तक ऐसी शब्दावली का इस्तेमाल करें। मत्ती 16:20, 21 में मसीहा के रूप में यीशु की पतरस द्वारा सही-सही पहचान करने के तुरन्त बाद हम पढ़ते हैं, ''तब उसने चेलों को चिताया, कि किसी से न कहना कि मैं मसीह हूं।'' क्यों? क्योंकि वे मसीहा के या सही मसीहा के वास्तविक *अर्थ* को अभी समझते नहीं थे। फिर हम पढ़ते हैं, ''उस समय से यीशु अपने चेलों को बताने लगा, अवश्य है कि मैं यरूशलेम को जाऊं और पुरनियों और प्रधान याजकों और शास्त्रियों के हाथ से बहुत दुख उठाऊं; और मार डाला जाऊं; और तीसरे दिन जी उठूं।'' यह सबसे अच्छा था कि वे तब तक मसीहा न कहें, जब तक उन्हें समझ नहीं आ जाती कि इस मसीहा ने विजय और हत्या नहीं करनी थी, बल्कि दुख और मृत्यु सहनी थी।

यह सब उससे बहुत अच्छी तरह मेल खाता है जिन यीशु के समय की यहूदी राजनैतिक और मसीहा से जुड़ी अपेक्षाओं के बारे में हम जानते हैं। स्पष्टतया यीशु अपने आप को मसीहा मानता ही नहीं था, बल्कि उसने परोक्ष रूप में अपने आपको ''मनुष्य का पुत्र'' कहलाने को प्राथमिकता देकर ऐसा होने का दावा किया।

परमेश्वर का पुत्र

जब पतरस ने मत्ती 16:16 में यीशु के प्रश्न का उत्तर दिया, तो उसका उत्तर दोहरा था: ''तू जीवते परमेश्वर का पुत्र मसीह है।'' इसी प्रकार, ''यहूदियों के सामने'' यीशु की पेशी में भी महायाजक ने उससे कहा था, ''यदि तू परमेश्वर का पुत्र मसीह है, तो हम से कह दे'' (मत्ती 26:63)। हर मामले में यीशु का उत्तर इस प्रकार से था कि वह उसके मसीहा होने और उसके पुत्रत्व दोनों की पुष्टि करता था।

आइए थोड़ा आगे मत्ती 11:25-27 में फिर चलते है:

> उसी समय यीशु ने कहा, हे पिता, स्वर्ग और पृथ्वी के प्रभु, तेरा मैं धन्यवाद करता हूं, कि तूने इन बातों को ज्ञानियों और समझदारों से छिपा रखा, और बालकों पर प्रकट किया है। हां, हे पिता, क्योंकि तुझे यही अच्छा लगा। मेरे पिता ने मुझे सब कुछ सौंपा है, और कोई पुत्र को नहीं जानता, केवल पिता; और कोई पिता को नहीं जानता, केवल पुत्र और वह जिस पर पुत्र उसे प्रकट करना चाहे।

यीशु ने परमेश्वर को ''मेरे पिता'' कहा और विलक्षण रूप में परमेश्वर को प्रकट करने वाला होने का दावा किया। इससे जुड़ा एक हवाला यूहन्ना 5:16-18 है। यीशु ने अभी-अभी एक लंगड़े को चंगा किया था और सब्त के दिन काम करने (अर्थात चंगाई देने) पर यहूदी अधिकरियों द्वारा तंग किया जा रहा था। यीशु ने इस घोषणा के साथ इस आरोप का उत्तर दिया, ''मेरा पिता अब तक काम करता है, और मैं भी काम करता हूं।'' यह पुत्र होने का एक और दावा था। अगली बातों से तो और बताने का पता चलता है:

> इस कारण यहूदी और भी अधिक उसके मार डालने का प्रयत्न करने लगे कि वह न केवल

सब्त के दिन की विधि को तोड़ता, परन्तु परमेश्वर को अपना पिता कह कर, *अपने आप को परमेश्वर के तुल्य ठहराता था* (आयत 18)।

यहूदी अधिकारी परमेश्वर का पुत्र होने के यीशु के दावे को समझते थे कि इसका अर्थ ''परमेश्वर के तुल्य'' होना है। बाद में यीशु ने यह चौंकाने वाली बात कही: ''मैं और पिता एक हैं'' (यूहन्ना 10:30)। बेशक, जैसा कई बार समझा जाता है यह दावा नहीं था कि यीशु और परमेश्वर एक ही *व्यक्ति* हैं, बल्कि यह दावा था कि उद्देश्य में वे एक ही स्तर पर और एक हैं यानी दोनों के लिए एक ही बात कही जा सकती है।

यीशु ने परमेश्वर का पुत्र होने का दावा किया। इसका सही-सही अर्थ क्या है? ''यीशु परमेश्वर का पुत्र है'' मसीह विश्वास के सबसे सामान्य अंगीकारों में से एक है, परन्तु क्या हम कभी यह पूछने के लिए रुके हैं कि यह वाक्यांश हम से क्या कहता है? विशेषकर, यीशु के यह कहने का क्या अर्थ था?

पहले तो यह यीशु और परमेश्वर के बीच एक विलक्षण सम्बन्ध का संकेत देता है। सामान्य अर्थ में लोगों और कई बार स्वर्गदूतों को भी बाइबल में ''परमेश्वर के पुत्र'' कहा गया है; परन्तु यीशु स्पष्टतया उससे कहीं अधिक कह रहा था। वरना उसके विरोधी इतना परेशान न होते। यूहन्ना 3:16 कहता है कि ''क्योंकि परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम रखा कि उस ने अपना *इकलौता पुत्र* दे दिया, ताकि जो कोई उस पर विश्वास करे, वह नाश न हो, परन्तु अनन्त जीवन पाए।'' यूनानी शब्द के अनुवाद ''इकलौता पुत्र'' (यू.: *monoges*) का अर्थ कुछ ''विलक्षण,'' ''केवल और केवल एक'' है। अपने आपको परमेश्वर का ''पुत्र'' कहकर यीशु परमेश्वर के साथ विलक्षण सम्बन्ध का दावा कर रहा था।

दूसरा, परमेश्वर का पुत्र, कम से कम परमेश्वर के स्तर का होने का ही संदेश देता है। यह यीशु के अपने शब्दों (''मैं और पिता एक हैं'') और उसे सुनने वालों की प्रतिक्रिया (और मान लिया कि वह ''अपने आपको परमेश्वर के तुल्य ठहरा रहा'' है) से स्पष्ट है। पुत्र होने का दावा अन्त में अपने आपको परमेश्वर कहलाने का दावा है। यीशु केवल यह नहीं कह रहा था कि ''मैं परमेश्वर के निकट हूं।'' बल्कि लगा कि वह यह कह रहा है कि ''परमेश्वर और मैं साये में एक जैसे हैं यानी हम एक हैं।'' इससे यह समझ आता है कि यीशु ने क्यों कहा कि उसे पाप क्षमा करने का अधिकार है (मरकुस 2:5-7), संकेत देता था कि एक दिन सब को न्याय में उसके सामने खड़ा होना है (देखें मत्ती 7:22, 23), और उससे पूर्ण सम्बन्ध की मांग करता है (मत्ती 10:32, 33)।

तीसरा, यीशु की बात की कि वह परमेश्वर का पुत्र है (देखें मत्ती 10:32, 33; लूका 10:22) 2 शमुएल 7 में परमेश्वर द्वारा दाऊद का ''घराना'' बनाने की प्रतिज्ञा किए हुए, ''दाऊद के पुत्र'' के साथ जान-बूझकर मिलाने का संकेत दिया। परमेश्वर ने यह भी कहा था, ''मैं उसका पिता ठहरूंगा, और वह मेरा पुत्र ठहरेगा'' (2 शमुएल 7:14)। परमेश्वर का पुत्र होने का दावा करना मसीहा होने के दावे से मेल खाता है।[2]

यीशु के आत्मपरिचय के अन्य संकेत

यीशु ने अपने आपको इस्राएल का मसीहा, मनुष्य का पुत्र और परमेश्वर का पुत्र कहा।

वह और क्या कह सकता था, जो उसके विषय में जिसने हमें बताया हमारी समझ को और कैसे बढ़ा सकता था?

''मैं तुम से सच-सच कहता हूं'' कुछ अनुवादों में ''आमीन, आमीन, आमीन'' कुछ अनुवादों में ''मैं तुम से कहता हूं'' शब्दों के साथ अपनी कुछ गम्भीर बातों को कहने का ढंग यूहन्ना रचित सुसमाचार में लिखित यीशु की शिक्षाओं की एक विशेषता है (5:19, 25; 6:26, 47, 53; 8:34, 58)। इन शब्दों में बड़े अधिकार के साथ जिसकी गारन्टी बोलने वाले के स्वभाव से दी जाती है, संकेत देते हैं। वे सुझाव देते हैं कि यीशु ने अपनी शिक्षाओं को स्वप्रमाणिक गुण वाली शिक्षाओं के रूप में देखा: उसे दूसरों को उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं थी; उसने केवल ''अपने आपको उद्धृत किया।'' यदि यीशु वह नहीं था जो उसने होने का दावा किया, तो वह असाधारण घमण्डी आदमी था।

यीशु का एक और चौंकाने वाला दावा लूका 6:1-5 में मिलता है। यीशु और उसके चेले सब्त के दिन अनाज के खेत में से जा रहे थे। चेलों को भूख लगी थी जिस कारण उन्होंने अनाज की कुछ बालियां तोड़कर खा लीं। फरीसियों के अनुसार, जो अपने आपको व्यवस्था के संरक्षक मानते थे, यह ''काम'' था। उन्होंने यीशु और उसके अनुयायियों की आलोचना की। यीशु ने उनकी आलोचना का दोहरा उत्तर दिया। (1) उसने ध्यान दिलाया कि वे उन्हें पवित्र शास्त्र की बात अच्छी तरह मालूम नहीं है क्योंकि पुराने नियम में दाऊद और उसके आदमियों ने नोब के मन्दिर में ऐसा ही ''अवैध'' काम किया था। जब दाऊद शाऊल के सामने से भाग रहा था, तो उसने ''हजूरी की रोटी'' अर्थात वे पवित्र रोटियां खा ली थीं जो परमेश्वर को भेंट की गईं थीं। मानवीय आवश्यकता पड़ने पर सब्त का नियम ''तोड़ने'' के लिए यह एक अच्छा उदाहरण था। (2) यीशु ने कुछ ऐसा कहा जो उन्हें परमेश्वर की निंदा जैसा लगा होगा: ''मनुष्य का पुत्र सब्त के दिन का भी प्रभु है'' अन्य शब्दों में यीशु कहा रहा था कि उसे इस्राएल के सबसे पवित्र संस्थानों में से एक पर अधिकार है। सब्त स्वयं परमेश्वर द्वारा ठहराया गया ईश्वरीय संस्थान था, इस कारण यह बिना किसी गलती के परमेश्वर से होने का दावा करता था।

इसी प्रकार से मन्दिर को ''शुद्ध करने'' (एक और ''कार्य का दृष्टांत'') में यीशु के कार्य आवश्यक रूप में उसके ऊपर अधिकार होने का दावा था। यीशु उस पवित्र घर को और वह बेहतर उपयोग के लिए शुद्ध नहीं कर रहा था; बल्कि वह इसके द्वारा दर्शाए जा रहे प्रबन्ध पर ईश्वरीय न्याय की घोषणा कर रहा था। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि प्रधान याजकों, ग्रंथियों और पुरनियों ने मांग की, ''हमें बात, तू इन कामों को किस अधिकार से करता है, और वह कौन है, जिस ने तुझे यह अधिकार दिया है?'' (लूका 20:2)। केवल वही जो मानता हो कि वह परमेश्वर के अधिकार से काम कर रहा है ऐसा करने का साहस कर सकता था।

एक अन्तिम उदाहरण पर विचार करते हैं। यूहन्ना 8 में यहूदियों ने दुष्ट आत्मा से ग्रस्त होने और सामरी होने का आरोप लगाकर यीशु का अपमान किया (8:48), और उसने उन्हें अपने पिता शैतान के स्वभाव से काम करने का आरोप लगा दिया। अन्त में उन्होंने ''हमारा पिता अब्राहम'' के साथ अपने सम्बन्ध बताकर अपना पक्ष रखा (8:53)। यीशु ने उत्तर दिया, ''तुम्हारा पिता अब्राहम मेरा दिन देखने की आशा से बहुत मगन था; और उसने देखा, और आनन्द किया'' (8:56)। इससे एक चौंकाने वाला प्रश्न खड़ा हो गया: ''अब तक तू पचास

वर्ष का नहीं, फिर भी तूने अब्राहम को देखा है?'' तब यीशु ने कुछ ऐसा कहा जिससे उसे मार डालने के लिए पत्थर उठाने पर उतारू हो गए: ''मैं तुम से सच-सच ['' आमीन, आमीन''] कहता हूं; कि पहिले इसके कि अब्राहम उत्पन्न हुआ, मैं हूं'' (8:58)। यहां हमें दो महत्वपूर्ण अवलोकन करने पड़ेंगे। (1) यीशु अब्रहाम से पहले होने का दावा कर रहा था, जो व्यावहारिक रूप में परमेश्वर होने का दावा था। (2) उसने अपने वाक्य को *ego eimi* अर्थात ''मैं हूं'' के साथ समाप्त किया। किसी भी यहूदी के लिए जो पवित्र शास्त्र को जानता हो, ये शब्द वह बात दिलाने के लिए थे जो जलती हुई झाड़ी से मूसा से परमेश्वर ने कही थी (निर्गमन 3)। जब मूसा ने यहोवा से यह बताने के लिए कहा था जो उसे फिरौन के पास यह कहने के लिए भेज रहा था कि इस्राएलियों को छोड़ दे, तो परमेश्वर ने उत्तर दिया था, ''तू इस्राएलियों से यह कहना, जिसका नाम मैं हूं, है उसी ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है।'' ''मैं हूं'' वाचा का वह नाम बन गया जिसके द्वारा परमेश्वर अपने लोगों में जाना जाता था। कोई हैरानी नहीं कि यहूदी लोग यीशु को ''मैं हूं'' कहने पर पथराव करने की सोच रहे थे! या तो यह गम्भीर सच्चाई थी या पूरी तरह से परमेश्वर की निंदा।

सारांश

यीशु ने अपने विषय में क्या कहा? एक आसान सा सवाल लग सकता है परन्तु इसका उत्तर बढ़ा जटिल है। यीशु अपने आपको होने वाला मसीहा अर्थात मनुष्य का भविष्यसूचक पुत्र और परमेश्वर का अपना पुत्र मानता था। उसके बारे में इन कथनों को सच न मानने वाले लोगों को भी प्रमाण के आधार पर यह मानना चाहिए कि अपने विषय में उसने यही दावा किया। फिर हमें उस सवाल का सामना करना है, जो यीशु ने चेलों से कहा था, ''परन्तु तुम मुझे क्या कहते हो?'' (मत्ती 16:15)।

टिप्पणियां

[1]आर. डब्ल्यू. फंक, *ऑनेस्ट टू जीज़स* (सेन फ्रांसिस्को: हारपरसनफ्रांसिस्को, 1996), 300. इस ढंग की एक समीक्षा जेम्स डी. जी. डन, *ए न्यू प्रस्पैक्टिव ऑन जीज़स: व्हट द क्वेस्ट फ़ॉर हिस्टॉरिकल जीज़स मिसड* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर एकेडमिक, 2005), 21-22. [2]नये नियम में यीशु के लिए इस्तेमाल किए गए विभिन्न शीर्षकों की एक सांख्यिकीय समीक्षा क्रेग ए. एवन्स, *फ़ेब्रिकेटिंग जीज़स: हाऊ मॉडर्न स्कॉलर्स डिस्टॉर्ट द गॉस्पल्स* (डाउनर्स ग्रोव, इलिनोइस: इंटरवर्सिटी प्रैस, 2006), 191-93.